Research Paper | Education | E-ISSN No : 2454-9916 | Volume : 9 | Issue : 11 | November 2023



''स्वामी विवेकानन्द का दर्षन तत्व मीमांसा के सन्दर्भ में''

डॉ दीप्ति सजवान

एस, स बी कॉलेज ऑफ एजुकेशन, विकासनगर, देहरादून, उत्तराखंड

ABSTRACT

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड आश्चर्यो से युक्त है इस संसार में ईश्वर ने अनेक प्रकार की अदभुत वस्तुओं का निर्माण कर मनुष्यो को इसके रहस्य को जानने, देखने व परखने हेतु जिज्ञासु बना दिया है। इस ब्रह्माण्ड की सर्वाधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि इस धरा में जन्म लेने वाले समस्त प्राणी, विचार व दर्शन के सन्दर्भ में अनेकता लिये हुये हैं। इस अनेकता में कुछ ऐसे दिव्य प्राणी भी जन्म लेते हैं जो परहित के लिये अवतरित होते हैं तथा सृष्टि के गूढ़ रहस्यों को जानकर समाज को उन्नत बनाने हेतु उन्हें समर्पित कर अपने को धन्य करते हैं। उनसे भी अधिक भाग्यशाली वे हैं जो ऐसी पूर्ण आत्माओं के विचारों तथा दृश्टिकोणों को हृदयगंम कर उनकी धारा में बहते हैं। ऐसे ही एक दिव्य आत्मा स्वामी विवेकानन्द थे जो हमारी पुण्य भारत भूमि की गोद में पले–बड़े और विश्व को अपने आध्यात्मिक दर्शन तथा वेदान्त दर्शन के माध्यम से तत्व ज्ञान से परिचित करवाया। अद्वैत वेदांत को यर्थाथ और समयानुकूल रूप से प्रस्तुत करने वालो में आधुनिक युग में स्वामी विवेकानन्द का नााम मुख्यतः उल्लेखनीय है।

KEYWORDS: वेदान्त, तत्व मीमांसा, ईश्वर, आत्मा, मनुश्य, समाज, धर्म, विश्व, माया, प्रकृति, मोक्ष।

प्रस्तावना

वेदान्त दर्शन का एकमात्र उद्देशय है "एकत्व की खोज करना।" स्वामी विवेकानन्द 'वेदान्त' को तत्व ज्ञान का सर्वोत्तम ग्रन्थ मानते थे। उनका मानना था कि ईश्वर, प्रकृति एवं आत्मा का एक रूप है। मानव, जीव और प्रकृति तथा आत्मा उसके शरीर हैं जिस प्रकार से मेरा एक शरीर है व एक आत्मा है उसी प्रकार सम्पूर्ण जगत एवं समस्त आत्मायें ईश्वर के शरीर हैं और ईश्वर समस्त आत्माओं की आत्मा है। स्वामी विवेकानन्द का मत था कि वेदान्त भुश्क तत्व मीमांसीय सिद्धान्तों का समूह मात्र नहीं है बल्कि वह तो सरलतम् जीवन दर्शन है। जिसे सामान्य व्यक्ति भी अपने जीवन में उतार सकता है। स्वामी विवेकानन्द के वेदान्त दर्शन के अनुसार तत्व मीमांसा के मूल बिन्दु है–
ईश्वर, आत्मा, मनुष्य, समाज, धर्म, विश्व, माया, प्रकृति, मोक्ष।

ईश्वर या ब्रह्म

स्वामी विवेकानन्द ईश्वर की व्याख्या करते हुये कहते हैं कि ईश्वर, प्रकृति, आत्मा व विश्व एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। ईश्वर जगत् के बाहर नही बल्कि उसके अन्दर विराजमान है। प्रत्येक आत्मा अव्यक्त ईश्वर है। बाह्य तथा आन्तरिक इन्द्रियों को अपने वश में करके आत्मा के इस ईश्वरत्व को व्यक्त करना ही जीवन का परम लक्ष्य है। निःस्वार्थता ही ईश्वर है। यदि व्यक्ति पूर्ण रूप से निस्वार्थ है तो वह ब्रह्म में ही स्थित है।

स्वामी विवेकानन्द का तर्क है कि जिस प्रकार मकड़ी अपने जाले का निर्माण स्वयं करती है और जाले बनाने का पदार्थ अपने अन्दर से स्वयं निकालती है इसी प्रकार ब्रह्म इस ब्रह्माण्ड का निर्माण स्वयं करता है और इस ब्रह्माण्ड के निर्माण का कर्ता व कारण वह स्वयं ही है।[1] परमेश्वर शाश्वत है बाकी सब कुछ नश्वर है। स्वामी विवेकानन्द ईश्वर के तीन गुणों को स्वीकार करते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापी, सर्वशक्तिशाली तथा कल्याणकारी है, ईश्वर को जानने के लिये ज्ञान आव यक है।[2]

स्वामी विवेकानन्द ईश्वर के विषय मे कहते हैं कि जो ईश्वर तुम्हारे अन्तर्मन में विराजमान है वही ईश्वर सभी के अन्दर विराजमान है। यदि तुम स्वंय के अन्दर विराजमान ईश्वर को नही जान पाये तो समझो तुमने कुछ भी नही जाना। प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा का मन्दिर है। ईश्वर के विषय मे कहा भी गया है।

"यतो वाचो निर्वन्ते। अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्णों विद्वान। न विभेति कदाचनेति। तस्येणी एवं शरीर आत्मा यः पूर्वस्य।।"

(तैतरीय उपनिषद्)

ईश्वर आत्मा का स्वरूप है वह ऊर्जा है, वह भुद्ध तथा अकलुश चेतना है वह जीवन का सार है वह अनंत है अच्छाई है। मनुष्य ईश्वर से अलग निर्जीव है, क्योंकि ईश्वर सजीव है। तथा ऐसे परमानन्द की अनुभूति है जहाँ पहुँचाने में वाणी असफल है जहाँ मन का पहुँचना कठिन है।[3]

वेदान्त मानता है कि सभी वस्तुओं को ईश्वर से सम्बन्धित कर प्रत्येक वस्तु में ईश्वर का अनुभव करो व कर्म करो। अपने जीवन को ही उपास्य ईश्वर बनाकर अनवरत कर्म करते रहो। परन्तु ध्यान रहे कि हमे यही जानना है कि सभी में ईश्वर का वास है हमें उसे कही ओर ढूंढने जाने की आवश्यकता नही है। ईश्वर प्रत्येक कार्य, प्रत्येक विचार तथा प्रत्येक भावना में विराजमान है। यही ध्येय व्यक्ति को कार्य करने के लिये प्रेरित करेगा।[4] सम्पूर्ण संसार ब्रह्ममय है, और सूक्ष्य आत्माएँ ब्रह्म अर्थात परमात्मा का अंश है। स्वामी विवेकानन्द मानते थे कि ब्रह्म का कोई स्वरूप नही है वह निराकार सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ हैं। माया के प्रभाव के कारण वह साकार ब्रह्म (ईश्वर) का स्वरूप धारण करता है। वह अनेक रूपों मे विद्यमान होते हुये भी एक है। वे कहते थे कि जिस प्रकार व्यक्ति दर्पण मे अपने रूप को देखता है उसी प्रकार ब्रह्म के दर्शन आत्मा में होते हैं। अतः ईश्वर सर्वव्यापी है प्राणियों के द्वारा ही उसे प्राप्त किया जा सकता है।[5] स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि मानव के शरीर रूपी मंदिर में ही भगवान का वास है जिस दिन इस सच्चाई को लोग मानने लगेंगे उसी दिन मानव दुनिया के हर दुःख और हर बन्धन से मुक्ति पा लेगा।

आत्मा

आत्मा के सम्बन्ध मे स्वामी विवेकानन्द अद्वैतवाादियों के विचार से सहमत थे। उनका मानना है कि सभी आत्माएँ परमात्मा का अंश मात्र है। परमात्मा की भाँति वे भी अनादि व अनन्त हैं। अतः उनके जन्म व मरण का तो प्रश्न ही नही उठता।[6] आत्मा सर्वव्यापक, अजर, अमर व शाश्वत तत्व है। स्वामी विवेकानन्द ने अपनी रचनाओं में आत्मा के स्वरूप की व्याख्या करते हुये इस बात पर बार–बार बल दिया की शरीर के शांत होने के पश्चात भी आत्मा की मृत्यु नहीं होती शरीर नाशवान है उसका जन्म व मृत्यु होते रहते हैं।

स्वामी विवेकानन्द वेदान्त के इस सत्य के स्वरूप को स्वीकार करते थे कि आत्माएँ ईश्वर के अंश स्वरूप है, आत्माएँ एक अपार और अनंत अग्निराशि की चिनगारियां भर

है। जिस प्रकार वृहत अग्निराशि से हजारों अग्निकण निकलते हैं उसी प्रकार पुरातन पुरुष अथवा परमात्मा से सारी आत्माएँ निकलती हैं। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि आत्मा जब तक अपने वास्तविक स्वरूप परमात्मा को नही पहचानती है और उसे प्राप्त नही कर लेती तब तक वह एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करती रहती है और जब वह अपने वास्तविक स्वरूप के दर्शन कर लेती है और उसे प्राप्त हो जाती है तब वह एक ही जीवन से मुक्त हो जाती है और यही उसकी मुक्ति कहलाती है। उनका मानना था कि यह पुरुष, यह आत्मा, मनुष्य का यह यर्थाथ स्वरूप, मुक्त अव्यय और अविनाशी सभी बन्धनों से परे है और इसीलिये वह न तो जन्म लेता है, न मरता है। मनुष्य की यह आत्मा नित्य, सनातन और जन्म–मरण रहित है।[7]

स्वामी विवेकानन्द इस बात को स्वीकार करते थे कि मानव आत्मधारी है और आत्मा का अन्तिम उद्देशय अपने स्वरूप को पहचानना है। स्वंय को पहचानने की अवस्था का मुख्यतः भिन्न–भिन्न अर्थ लगाया जाता है कोई इसे आत्मानुभूति कहता है कोई आत्मज्ञान और कोई मुक्ति। स्वामी का मत था कि इसकी प्राप्ति राजयोग, कर्मयोग, शक्तियोग व ज्ञान योग के द्वारा ही सम्भव है। स्वामी विवेकानन्द की आत्मा सम्बन्धी धारणा से ज्ञात होता है कि जिस प्रकार गीता में भगवान श्री कृष्ण ने विचलित अर्जुन को आत्मा की अमरता का सन्देश देकर कर्मयोग में परिणत किया था उसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द का लक्ष्य मानव को कर्म द्वारा अमरता का सन्देश प्रदान करना था।

"आत्मना विन्दते वीर्यं, विद्यया विन्दते अमृतं"[8]

केन उपनिषद

अर्थात "मनुष्य आत्मा द्वारा महान वीर्य प्राप्त करता है और उसके साक्षात्कार द्वारा अमृतत्व।"

मनुष्य

मनुष्य एक चिंतनशील प्राणी है वह पशु से इसलिये ही भिन्न है क्योंकि वह अपने नैतिक स्तर को उठाने के लिये निरन्तर संघर्श करता रहता है। वह यह संघर्श बाह्य क्षेत्र के लिये नही अपितु अपनी आन्तरिक प्रवृतियों से भी करता रहता है। मनुष्य की विशेषता बताते हुये स्वामी विवेकानन्द मनुष्य को तीन तत्वों का योग मानते हैं। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में– तुम्हाने पास तीन चीजें हैं– शरीर, मन, आत्मा। आत्मा इन्द्रियातीत है मन जन्म और मृत्यु का पात्र है और यही दशा शरीर की है। स्वामी विवेकानन्द का मानना है कि मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है। उसे अपनी शक्तियों का आभास होना चाहिए। उसे यह ज्ञात होना चाहिए कि वह ईश्वर की सन्तान है अमर आनन्द का भागी है, पवित्र और पूर्ण आत्मा है और इस मृत्युभूमि का देवता है।[9]

स्वामी विवेकानन्द मनुष्य को श्रेश्ठतम् स्थान तक पहुँचाने के लिये आश्रम व्यवस्था को आव यक बताते हैं। स्वामी विवेकानन्द का कहना था कि हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि हम प्रत्येक मानव को उसके उच्चतम आदर्श को प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित करें तथा उस आदर्श को प्राप्त करने हेतु संत जैसी प्रवृत्ति को अपनाना होगा। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि हिन्दू धर्म ाास्त्रों के अनुसार सार्वभौम मानवता के साधारण कर्त्तव्यों के अतिरिक्त प्रत्येक मानव के जीवन के कुछ विशेश कर्त्तव्य भी होते हैं। एक गृहस्थ व्यक्ति का जीवन भी उतना ही श्रेश्ठ होता है जितना की एक ब्रह्मचारी सन्यासी का जिसने अपना जीवन धार्मिक कार्यों के लिये समर्पित कर दिया हो।

वैराग्यबोधौ पुरुषस्य पक्षिवत्
पक्षौ विजानीहि विचक्षण त्वम्।
विमुक्तिसौधाग्रतलाधिरोहणं
ताभ्यां विना नान्यतरेण सिध्यति।।[10]

भांकरचार्य

अर्थात हे! मानव यह जान लो कि वैराग्य और आध्यात्म, चेतना अथवा विवके ये दो गुण पक्षी के दो पंखो के समान है। इनमें से एक के भी न होने पर मनुष्य मुक्ति तक नही पहुँच सकता है। अर्थात मानव को पूर्णता प्राप्त करने हेतु वैराग्य व आध्यात्म को अपनाना होगा। स्वामी विवेकानन्द के विचार मनुष्य को आध्यात्म को अपनाने की प्रेरणा देते है।

समाज

श्री रामकृश्ण परमंहस के आध्यात्मिक विचारों का स्वामी विवेकानन्द पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। उन्होने अपने आध्यात्मिक विचारों के माध्यम से समाज की उन्नति हेतु अनेक विचार प्रस्तुत किये। स्वामी विवेकानन्द के समय में भारतीय समाज की स्थिति अत्यन्त भोचनीय थी। समाज में व्याप्त छुआछूत, अस्पृ यता, जातिवाद, वर्गभेद, धार्मिक कर्मकाण्ड व स्त्रियों की दुर्द ाा से स्वामी जी अत्यधिक व्यथित थे। इस दशा के विषय में स्वामी विवेकानन्द ने अपने विचार प्रकट करते हुये कहा कि जब तब करोड़ों मनुष्य भूख और अज्ञान में जीवन व्यतीत कर रहे हैं तब तक मैं उस प्रत्येक मनुष्य को दे ाद्रोही मानता हूँ जो उनके व्यय से ि ाक्षित हुआ है और अब उनकी ओर अल्प मात्र भी ध्यान नही देता है। वे मानते थे कि जनसमुदाय की उपेक्षा करना हमारा महान राश्ट्रीय पाप है और यही हमारे अधः पतन का कारण है।[11] क्योंकि इस दे ा मे साध्य तो अनेक है किन्तु साधन नही। मस्तिक तो है परन्तु हाथ नही। यदि हतश्री : अभागे, निर्बुद्धि, पददलित, चिरबुभुक्षित, झगड़ालू और ईर्श्यालु भारतवासियों को कोई हृदय से प्यार करने लगे तो भारत पुनः जाग्रत हो जायेगा। भारत के सभी अनर्थों की जड़ है– जन–साधारण की गरीबी व स्त्रियों की दुर्द ाा। यदि जन–साधारण आर्थिक उन्नति करेगा तो राश्ट्र स्वतः ही विकसित होने लगेगा और यदि स्त्रियाँ अपने प्राचीन आदर्शो को पुनः प्राप्त कर ले तो राश्ट्रीय विकास तीव्रता से होने लगेगा।[12]

स्वामी विवेकानन्द ने समाज का जो स्वप्न देखा वह एक ऐसे समाज का था जिसने व्यवहारिक वेदान्त को अपनाया हुआ था व जिसमें असमानता, छूत–अछूत, ऊँच–नीच अस्पृ यता आदि न हो। समाज के समस्त वर्ग व जातियों को एक समान स्थान प्राप्त हो। व्यक्ति अपनी पहचान अपने कर्म से बनाये न कि बाह्य आडम्बरों, रूढियों व निम्न कोटि के विचारों से। समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी हो, उन्हे पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हो जिससे कि भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।" "यत्रैतास्यु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।"**[13] सार्थक सिद्ध हो सके।

विश्व

स्वामी विवेकानन्द जी वसुधैव कुटम्बकम् में विश्वास करते थे। इस भावना का विकास वे विश्व–बन्धुत्व प्रदान करने वाली शिक्षा द्वारा करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि इसी भावना के द्वारा विद्यार्थियों के मनस् में ये भाव जाग्रत किये जा सकते हैं कि चींटी से लेकर मानव तक सभी मे एक सी आत्मा विद्यमान है। विश्व में सभी जीव एक ही ईश्वर की सन्तान है। सभी में एक दिव्य आत्मा का वास है और सभी उसी दिव्य भाक्ति से प्रकाि ात है। विश्व के प्रति हमारा बहुत बड़ा कर्त्तव्य है कि हम मिल–जुल कर समानता के साथ प्रेम पूर्वक रहें।[14]

स्वामी विवेकानन्द भारतवासियों को आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करने के प्रबल समर्थक थे परन्तु वे चाहते थे कि हम विश्व के पा चात्य दे ाों से तकनीकी शिक्षा भी ग्रहण करें। ऐसा करने से दे ा की प्रगति होगी व विश्व पटल पर भारत अपना अग्रणी स्थान बनाने में सफलता प्राप्त करेगा। सम्पूर्ण विश्व से प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी व मैत्री–पूर्ण सम्बन्ध स्थापित होंगे। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि "हृदय ही मनुष्य को उच्च बनाता है अतः शिक्षा द्वारा हृदय को जाग्रत करो तभी ब्रह्मा की अनुभूति होगी।" हृदय पक्ष की शिक्षा वास्तव मे विश्व–बन्धुत्व की शिक्षा के उद्देशय द्वारा ही सम्भव है। ई ाोपनिशद (4) मे कहा गया है कि–

अयं निजः परोवेत्ति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

अर्थात यह मेरा दे ावासी है यह परदे ाी है ऐसी दृष्टि केवल ओछे मन वाले की है। एक उदारमन के लिये समस्त संसार एक कुटुम्ब है।[15] अतः स्पश्ट है कि स्वामी विवेकानन्द के विचार एक ि ाक्षित, सभ्य व आपसी द्वेश–भाव से मुक्त विश्व की धारणा के प्रबल समर्थक है।

धर्म

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि भारत में किसी प्रकार के सुधार या उन्नति की

आवश्यकता है तो सबसे पहले धर्म की उन्नति की आवश्यकता है। भारत को समाजवादी या राजनीतिक विचारों से पल्लवित करने के लिये आध्यात्मिक विचारों द्वारा पल्लवित करो। उनका कहना था कि इन बातों को कहने का तात्पर्य यह नही है कि हमें दूसरी किसी चीज की आवश्यकता नही है मेरा तात्पर्य है कि यह समस्त वस्तुयें गौण है धर्म ही मुख्य विषय है। भारतवासी पहले धर्म चाहता है फिर कुछ और। स्वामी विवेकानन्द धर्म को जीवन का आधार मानते थे क्योंकि आत्म–साक्षात्कार का सर्वश्रेश्ठ साधन धर्म ही है परन्तु धर्म की परिधि संकुचित न होकर अत्यधिक व्यापक है। धर्म का अर्थ किसी धर्म–विशेश से नही है[16] धर्म वह वस्तु है जिससे प ु मनुष्य तक और मनुष्य परमात्मा तक उठ सकता है। असीम भाक्ति को ही धर्म तथा ईश्वर कहा जाता है।

स्वामी विवेकानन्द का धर्म के प्रति स्पश्ट दृष्टिकोण था वे कहते थे– धर्म न तो मतों मे है न पन्थों में और न ही तार्किक विवाद में। धर्म का अर्थ है अपने ब्रह्मत्व को जान लेना उसका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करना और उसी के रूप में मिल जाना। अनुभूति ही सार वस्तु है। हजार वर्श गंगा–स्नान करने से व कई वर्शों तक निरामिश खाकर भी यदि आत्म–विकास नही होता तो सब जानना व्यर्थ है क्योंकि सभी उपासनाओं का सार यही है कि मनुष्य पवित्र रहे और सदैव दूसरों का भला करे यही उसका सर्वोत्तम धर्म है। स्वामी जी धार्मिक कर्मकाण्डों से युक्त धर्म का खण्डन करते थे उनका मानना था कि ि ाव की प्राप्ति निर्धन, दुर्बल व रोगी मनुष्य की सेवा द्वारा होती है मूर्ति पूजन के द्वारा नही।[17]

स्वामी विवेकानन्द मानते हैं कि धर्म किसी भी मात्रा में वार्तालाप करने से नही बनता बल्कि धर्म का सम्बन्ध हृदय की अनुभूति से है। आत्मानुभूति व आत्म–साक्षात्कार ही धर्म की शिक्षा का स्वरूप है। निःस्वार्थता ही धर्म की कसौटी है सबसे महान् धर्म है अपनी आत्मा के प्रति सच्चा बनना। धर्म का अर्थ है हृदय के अन्तरस्थ प्रदे ा में सत्य की उपलब्धि। धर्म के द्वारा व्यक्ति मे पुरुषत्व उत्पन्न होता है धर्म द्वारा व्यक्ति का लौकिक एवं अलौकिक कल्याण होता है गीता मे लिखा है–

"अहिंसा सत्यमस्तेय काम क्रोधलोभता।
भूताप्रियहितेशु च धर्मोदयं सार्ववर्णिक।।"

अर्थात अहिंसा, सत्य, अस्तेय तथा काम, क्रोध एवं लोभ से मुक्ति पाना ही धर्म है।[18] अतः स्पश्ट है कि स्वामी विवेकानन्द धार्मिक कर्मकाण्डों के बजाय मनुष्य के कर्म, पवित्रता आत्मा के प्रति सत्यता और परहित को धर्म मानते थे।

माया

माया शब्द का व्यवहार साधारणतः भम्र, भ्रान्ति आदि शब्दों के रूपों में किया जाता है, स्वामी विवेकानन्द के अनुसार माया की सफलता उन स्तम्भों मे से एक है जिन पर वेदान्त की स्थापना हुयी है।[19]

माया शब्द का प्रयोग मुख्यतः अज्ञान असत्य, मोह, लोभ, बंधन, दासता, काम इत्यादि भावनाओं के लिये किया जाता है यही कारण है कि साधु, सन्त, सन्यासी व दार्शनिक व्यक्ति माया से दूर रहने के लिये अनेक तर्क देते रहते हैं उनका मानना होता है कि संसार का त्याग करने से ही मानव को मुक्ति अथवा मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार यह निराशावादी दृष्टिकोण है। जगत में केवल बुराईयां ही नही पायी जाती है जगत तो सत्–असत्, पुरुष–प्रकृति, स्वतन्त्रता–परतन्त्रता बुद्धि–भाव, सुन्दर–असुन्दर दोनों का ही सम्मुच्चय है। हमें माया के साथ संघर्श करते हुये उस वस्तु तक पहुँचना है जो माया से प्राप्त होती है।

स्वामी विवेकानन्द जी का विचार था कि वेदान्त का दृष्टिकोण न तो आशावादी है, और न निराशावादी। वेदान्त ऐसा नही कहता है कि संसार केवल शुभ–ही–शुभ है अथवा केवल अशुभ–ही–अशुभ, वरन् वह कहता है कि हमारे शुभ और अशुभ दोनों का मूल्य बराबर है।[20] स्वामी विवेकानन्द की माया सम्बन्धी धारणा मूलतः वेदान्त की धारणा है उन्होने अपने "माया और भ्रम" भीर्शक पर भाशण देते हुये कहा कि संसार मे जीवन का अन्तिम लक्ष्य मृत्यु है इसके बावजूद मनुष्य जीवन में प्रबल रूप से आसक्त है और इसका कारण है माया। अतः स्पश्ट है कि स्वामी विवेकानन्द माया के विरोधी नही हैं लेकिन अंतिम सत्य मृत्यु को दृष्टिगत रखते हुये उनका तर्क है कि सन्तुलित जीवन यापन करना चाहिये।

प्रकृति

स्वामी विवेकानन्द ने प्रकृति का दर्शन कर अपने आपको प्रकृति के अत्यधिक समीप रखने का प्रयास किया व प्रकृति को ही ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का स्रोत माना। प्रकृति का निर्माण मानव प्रकृति व प्रकृति माता के सम्पर्क से हुआ है। मानव अनेक दैवीय शक्तियों से युक्त है व प्रकृति कई गूढ़, मूर्त व अमूर्त रहस्यों को समेटे हुये हैं। स्वामी विवेकानन्द मानव की दैवीय पूर्णता के विषय में कहते हैं कि– मानव में अन्तर्निहित पूर्णता है पूर्णता का विकास मानव की प्रकृति के अनुरूप व प्रकृति की गोद में ही सम्भव है। इस विषय में वे उपनिषद की एक कथा सुनाते हैं– ब्रह्मचारी सत्यकाम अपने गुरू के पास विद्यार्जन के लिये आश्रम में जाता है तो गुरू उसे गायें चराने वन मे भेज देते हैं। गायें चराते हुये उसे कई महीने बीत जाते हैं इतने दिनों में उसकी गायों की संख्या दुगुनी हो जाती है। जब सत्यकाम ने वापस आश्रम जाने का विचार किया जो मार्ग में उसे वृशभ, अग्नि तथा अन्य कई प्राणियों ने ब्रह्म ज्ञान दिया जब सत्यकाम गुरू के पास पहुँचा तो गुरू को उसे देखते ही ज्ञात हो गया कि सत्यकाम ने ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

स्वामी विवेकानन्द इस कथा के माध्यम से वह दर्शाना चाहते थे कि मानव के नैसर्गिक गुणों का विकास सर्वदा प्रकृति के सम्पर्क में रहने से ही होता है। अतः प्रकृति के सम्पर्क में रहकर ही सद्गुण उत्पन्न किये जा सकते है।[21]

मोक्ष

स्वामी विवेकानन्द पर गीता में वर्णित कर्म योग, भक्ति योग, राजयोग व ज्ञान योग का सर्वाधिक प्रभाव था यही कारण था कि उनका ईश्वर प्राप्ति से तात्पर्य मोक्ष से था। सामान्य रूप मोक्ष का अर्थ होता है जीवन से छुटकारा तथा अन्य किसी जन्म से मुक्ति। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि आत्मा–परमात्मा की अनुभूति कर परमात्मा की भारण में पहुँचना ही मोक्ष कहलाता है। मोक्ष का अर्थ संसार के आवागमन से छुटकारा नही है बल्कि सांसारिक कर्मों से मुक्ति है। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि वेदान्त के अध्ययन के द्वारा व कर्मयोग, शक्तियोग, राजयोग व ज्ञानयोग को जीवन मे अपनाने से ही मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।[22]

मुल्यांकन

इक्कीसवीं सदी के परिवर्तित परिवेश में जहां सूचना एवं तकनीकी का युग चल रहा है। ऐसे में स्वामी विवेकानन्द के दार्शनिक विचारों को अपनाना अत्यन्त आव यक है। स्वामी विवेकानन्द ने अपने तत्व दर्शन के द्वारा ज्ञान की वास्तविकता का अध्ययन कर, आम–जनमानस को नव्य वेदान्त दर्शन से परिचित कराकर उसे अपने व्यवहारिक जीवन में उतारने हेतु प्रेरित किया व परम तत्व के वास्तविक स्वरूप से परिचय कराया। स्वामी विवेकानन्द का दर्शन आज भी हमारे लिये आदर्श और प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है और उसे साकार रूप देने के लिये हम निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

REFERENCES

1. सक्सेना, डॉ. एस. (प्रथम संस्करण), महान शिक्षा–शास्त्री, आगरा : साहित्य प्रकाशन, पृ.33।
2. सिंह, यू. और सिंह, डॉ. आर. (2010), शिक्षा तथा उदीयमान भारतीय समाज, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, पृ.125।
3. भद्रेशदास, एस. (2011), 'द' मुण्डकोपनिशद, www.swaminarayan.org>seesays.
4. बोधसारानन्द, एस. (2006), विवेकानन्द एक सचित्र जीवनी, कोलकाता : अद्वैत आश्रम, पृ.66।
5. सक्सेना, डॉ. एस. (प्रथम संस्करण), महान शिक्षा–शास्त्री, आगरा : साहित्य प्रकाशन, पृ.33।
6. बोधसारानन्द, एस. (2012), विवेकानन्द साहित्य (9), कोलकाता : अद्वैत आश्रम, पृ.231।
7. उपरोक्त वहीं, पृ.232।
8. रंगनाथानन्द, एस. (2014), उपनिशदों का सन्देश, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.220।
9. ब्रह्मस्थानन्द, एस. (2014), व्यक्तित्व का विकास (स्वामी विवेकानन्द), कोलकाता : रामकृष्ण मठ, पृ.8।
10. रंगनाथानन्द, एस. (2014), उपनिशदों का सन्देश, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.399।
11. ब्रह्मस्थानन्द, एस. (2013), शिक्षा, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.56।
12. ब्रह्मस्थानन्द, एस. (2014), विवेकानन्द–राष्ट्र को अह्वान, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.67।
13. "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः http://vichaarsankalan.wordpress.com>..
14. सिन्धू, डॉ. आई. एस. और सिन्हा, डॉ. एम. (2008), विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षा तथा शिक्षक की भूमिका, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन्स, पृ.222।
15. रंगनाथानन्द, एस. (2014), उपनिशदों का सन्देश, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.118।
16. सक्सेना, डॉ. एस. (नवीन संस्करण), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, आगरा : साहित्य प्रकाशन, पृ.58।
17. विदेहात्मानन्द, एस. (2014), शिक्षा का आदर्श, नागपुर : रामकृष्ण मठ, पृ.53।
18. सिंह, डॉ. आर. और सिंह, यू. (2010), शिक्षा तथा उदीयमान भारतीय समाज, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, पृ.67।
19. बोधसारानन्द, एस. (2009), विवेकानन्द साहित्य (2), कोलकाता : अद्वैत आश्रम, पृ.43।
20. उपरोक्त वहीं, पृ.57।

21. बोधसारानन्द, एस. (2009), विवेकानन्द साहित्य (4), कोलकाताः अद्वैत आश्रम, पृ.262।
22. बोधसारानन्द, एस. (2009), विवेकानन्द साहित्य (3), कोलकाताः अद्वैत आश्रम, पृ.80।